एक माँ के अस्तित्त्व की खोज : '1084वें की माँ '

डॉ.भानुबहन ए. वसावा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग,गुजरात विश्वविद्यालय,अहमदाबाद
मोबाइल नं - 9727918625
ईमेल - bavasava@gujaratuniversity.ac.in
bhanumchaudhari15@gmal.com

सारांश :

महाश्वेता देवी लिखित '1084वें की माँ' उपन्यास 70 के दशक के बंगाल के सामाजिक एवं राजनीतिक माहौल को दर्शाता है। उस वक्त नक्सलवाद अपने चरमसीमा पर था। छात्रों, गरीबों और आम जनता में अपनी सरकार को लेकर भयंकर असंतोष फैला हुआ था। जिससे इस प्रकार की परिस्थति उत्पन्न होती है। व्रती एक उच्च मध्यमवर्गीय परिवार का बेटा है। जब उसके मृत्यु की खबर उसके परिवार तक पहँचायी जाती है तो उनके परिवार के लिए यह बात बड़ी शर्मनाक बन जाती है। व्रती के पिताजी अपनी सारी पहुँच लगाकर इस बात को दबा देते हैं कि व्रती एक नक्सलवादी गिरोह का सदस्य था। लेकिन उसकी माँ सुजाता के लिए यह गुत्थी बनकर रह जाती है कि व्रती ने जो किया वो क्यों किया ? व्रती को गुजरे हुए दो साल हो गये हैं। उसके अपने ही परिवार में व्रती को भुलाया जा चुका है। इस बात का अंदेशा इसीसे लगाया जा सकता है कि उसकी पुण्यतिथि के दिन ही सुजाता की छोटी बेटी तुली याने कि व्रती की बहन की सगाई रखी गई है। लेकिन सुजाता इस दिन को व्रती से जुड़े लोगों के साथ बिताना पसंद करती है। इसी दिन की विस्तृत चर्चा इस उपन्यास में की गई है।

बीज शब्द : *लाल बंगाल के लाल कॉमरेड, मुक्ति दशक, कर्म-दक्षता, अभिजात चेहरा, अनुगीमिनी का नीरव, सत्वहीन अस्तित्व, आर्त्त-विलाप।*

भूमिका :

भारत के आदिवासी समाज और उसके जीवन पर महाश्वेता देवी ने काफी कथा साहित्य का निर्माण किया है। एक पत्रकार, लेखक और आंदोलनधर्मी के रूप में महाश्वेता देवी ने अपार ख्याति प्राप्त की है। उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं –'जंगल के दावेदार', 'नील छवि', 'टैरोडैक्टिल', '1084 की माँ', 'अग्निगर्भ', 'चौटिट मुण्डा और उसका तीर', 'झाँसी की रानी', 'ग्राम बाँग्ला'आदि। महाश्वेता देवी की रचनाओं पर सन् 1968 में 'संघर्ष', 1993 में 'रूदाली', 1998 में '1084वें की माँ' और 2006 में 'माटीमाई' नामक फिल्म बनी है। लेखिका ने इस उपन्यास में नक्सलवाद को एक माँ की नजर से देखा है। इतना ही नहीं लेखिका नक्सलवाद की साक्षी रही थीं। जन संघर्षों ने लेखिका के जीवन को भी परिवर्तित कर दिया था और लेखन को भी। 'हजार चौरासी की माँ' उपन्यास में उस 'माँ' की मर्मस्पर्शी कहानी है जिसने जान लिया है कि उसके पुत्र की लाश पुलिस हिरासत में कैसे और क्यों है ?

'1084वें की माँ' उपन्यास सन् 1979 में प्रकाशित हुआ था। लेखिका ने एक दिन का चुस्त समय इस उपन्यास में बताया है – सुबह, दोपहर, शाम और रात। ऐसे चार भागों में कथा का विभाजन हुआ है। कथा का प्रारंभ एक टेलिफोन के आने से होता है। उपन्यास का प्रमुख चरित्र है – व्रती। जो इस दुनिया में नहीं है। वह एक उच्च मध्यमवर्गीय परिवार का लड़का था। जब उसके मृत्यु की खबर उसके परिवार को लगी तो उनके लिए यह शर्मनाक बात थी। व्रती के पिताजी अपनी सारी पहुँच लगाकर इस बात को दबा देता है कि व्रती एक नक्सलवादी गिरोह का सदस्य था। लेकिन उसकी माँ सुजाता के लिए यह गुत्थी बनकर रह जाती है कि व्रती ने जो किया वो क्यों किया ? व्रती को गुजरे हुए दो साल हो गये हैं। उसके अपने ही परिवार में व्रती को भुलाया जा चूका है। इस बात का अंदेशा इसीसे लगाया जा सकता है कि उसकी पुण्यतिथि के दिन ही सुजाता की छोटी बेटी तुली याने कि व्रती की बहन की सगाई रखी जाती है। लेकिन सुजाता इस दिन को व्रती से जुड़े लोगों के साथ बिताना पसंद करती है। इसी दिन की व्याख्या इस उपन्यास में की गई है। आज व्रती का जन्मदिन है, उसी ही दिन उसका मृत्युदिन भी है। आज ही उसकी बहन तुली की सगाई है। समय सम्बंधित स्पष्टता प्रतीकात्मक रूप में दिखाई देती है। ऐसा ही एक फोन दो साल पहले व्रती की हत्या के बाद, जिनके इशारों से ऐसी हत्याएँ होती हैं वे अब व्रती के परिवार का शुभचिंतक सरोजपाल का था। सरोजपाल ने ही व्रती की मृत्यु के समाचार दिये थे। तुली का पति टोनी कापड़िया के दोस्त होने के नाते सरोजपाल ने व्रती का नाम छिपाने में दिव्यनाथ को काफी मदद की थी। व्रती की दोस्त नंदिनी का भी फोन आता है। व्रती भले ही निस्संदेह जीवित नहीं है पर अपने विचारों से वह आज भी जीवित है। इस बात की प्रतिति उनकी माँ (सुजाता) को अंत में होती है। अपनी बदनामी के डर से क्रांतिकारी शहीद बेटे का नाम अखबार में न आये इसके लिए हर संभव प्रयत्न व्रती के पिता दिव्यनाथ एवं बड़े भाई ज्योति करते हैं। इतना ही नहीं, व्रती की लाश को देखने तक ये लोग नहीं जाते। अपने बेटे की लाश को देखने के लिए बेताब सुजाता को कार देने के लिए दिव्यनाथ मना कर देता है। इसीलिए कि कार के नंबर से उसकी पहचान हो जाए तो ? उसी क्षण सुजाता 'खून के रिश्ते की व्यर्थता' और 'खून के रिश्ते की तीव्रता' एकसाथ महसूस करती है। उसी क्षण सुजाता का व्रती के साथ का सम्बन्ध गाढ़ हो जाता है और दिव्यनाथ के साथ का सम्बन्ध खत्म हो जाता है। एक माँ अपने लाड़ले बेटे को पहचान न सकी इसका असहनीय दु:ख सुजाता को होता है। इसीलिए अपने बेटे के लिए पूरा दिन खोजबीन करके अंत में अपने आपको, अपने अस्तित्त्व को, स्व को पहचान लेती है। इसी संदर्भ में डॉ.भरत मेहता ने उचित ही कहा है कि – "पुत्रनी शोध करवा निकळेली सुजाता 'पोताने' शोधीने पाछी फरे छे। माँ ने आ ओळख सुधी पहोंचाडवा माटे दिकराए मोटी कींमत चूकवी छे। व्रतीना मौत वड़े ए जीवन नो अर्थ पामी छे। करूण घटनाथी आरंभायेली आ कृतिनुं दर्शन निराशावादी नथी, व्यंग्य थी खीचोखीच भरेली आ कृति भारोभार मानवतावादी छे। जीवननो,सार्थक जीवननो पुरस्कार करती कृति छे."[1] सुजाता अपने इस स्व की पहचान तक, अपने अस्तित्व तक कैसे पहुँची है, उसके लिए इस उपन्यास के चारों विभागों से गुजरना बहुत जरूरी है।

पहला खंड 'सुबह' में सुजाता अपने बिते हुए कल को याद कर रही है। दिव्यनाथ स्वयं एक ही संतान होने के नाते कई संतानों की आशा रखनेवाली उसकी माँ और सुजाता की सास सुजाता को बार-बार माँ बनना सह नहीं सकती और द्वेषपूर्ण आँखों से सुजाता को देखकर प्रसुति के अंतिम दिनों में ही सुजाता को छोड़कर उनकी

सास अपने बहन के घर चली जाती है। पति दिव्यनाथ भी उसे केवल भोग्या के रूप में ही देखता है। दिव्यनाथ के दूसरी औरतों के साथ के सम्बन्ध उसकी मर्दानगी मानी जाती है। उसकी माता और बेटी उसमें उसका साथ देती है। सुजाता के लिए नौकरानी हेम ही सर्वस्व है। हेम व्रती को बड़ा करती है। ज्योति, नीपा, तुली को उसकी सास ने बड़ा किया है। बड़ा होकर व्रती अपने परिवार से दूर होता जाता है। बुर्जुवा मूल्यों पर उसे श्रध्दा नहीं है। टाईपिस्ट लड़की के साथ अपने पिता के सम्बन्ध देखकर पिता को वह धमकी देता है। पिता की ऐसी हरकतों को सहन एवं नज़रअंदाज करती अपनी माँ के प्रति उसकी अनुकंपा है। उसे अपने घर की नौकरानी हेम के प्रति अनुकंपा है। अपने ही देवर के साथ नाजायज सम्बन्ध रखनेवाली बड़ी बहन नीपा या 420 टोनी के साथ सगाई करती तुली उसे पसंद नहीं है। व्रती की मृत्यु के बाद तीन महिने तक तो सुजाता सुनमुन हो जाती है। फिर धीरे-धीरे सब अपने आप संभलने लगता है। मुंबई जा रहे दिव्यनाथ के बैग में इसबगुल का पैकेट रखती है। ज्योति के बेटे को पेन्सिल छिल देती है। बैंक जाती है। बीमार बेटे को खोनेवाले भीखन नौकर को मिलने जाती है। शाम को व्रती का कमरा देखने जाती है। इतना ही नहीं कमरे के ताले की चाबी अधिकार से मांगती है। इस प्रक्रार व्रती के कारण उसकी दबी हुई आवाज कुछ ऊपर उठने का प्रयत्न करती है। दिव्यनाथ कुछ आर्थिक कठिनाईयों के कारण ही उसे नौकरी करने भेजता है। किन्तु जब ऐसी कठिनाईयाँ न होने के बाद भी सुजाता अपनी मनपसंद नौकरी चालू रखती है। व्रती के जन्म के बाद भी और बच्चे पैदा करने के लिए वह तैयार नहीं होती। यहाँ से मानो विद्रोह के बीज बो जाते हैं। यहाँ व्रती का कमरा व्रती के विचारों का प्रतीक बन जाता है। व्रती के कमरे में सुजाता का बार-बार जाना अपने आप से बातें करना इसी अर्थ में सूचक है। व्रती के जूतें, तस्वीर, छाता की वह फिकर करती है। वह नंदिनी को व्रती नहीं दे पायी पर व्रती की तस्वीर अवश्य देती है। अपने पति दिव्यनाथ के पास व्रती के कमरे की चाबी मांगती हुई सुजाता में विद्रोह का स्वर दिखाई देता है। अपने बेटे की एक-एक स्मृतियों को वह एकत्रित करती है। व्रती ने बचपन में 'मेरी प्रिय व्यक्ति' में अपनी माँ पर ही निबंध लिखा था। व्रती कविताएँ एवं क्रांतिकारी नाटक भी लिखता रहता। व्रती के बारे में अधिकत्तर जानकारी तो सुजाता को अपने घरकी नौकरानी हेम के पास से प्राप्त होती है। जैसे कि – व्रती और नंदिनी के सम्बन्ध के बारे में हेम ही सुजाता को बताती है। तुली के सगाई के दिन सुजाता बाहर जाने से पहले तुली को सुनाती है – "तुली, मैं व्रती के बारे में तुझसे कोई बातचीत करना नहीं चाहती,फ़ायदा क्या है ? तू उसे पहचानती ही नहीं है।" [2] व्रती के बारे में, उसके जीवनमूल्यों के बारे में सुजाता कभी भी इतनी दृढ़ता के साथ नहीं बोली थी। व्रती भले ही प्रत्यक्ष रूप में नहीं है, पर परोक्ष रूप में तो सुजाता की साँसों में समाया हुआ है।

व्रती की पुण्यतिथि के दिन ही स्वामी जी के कहने से उत्तम मुहूर्त होने के कारण तुली की सगाई रखना भी यह परिवार अनुचित नहीं समझता है। इतना ही नहीं इस सगाई की पार्टी में उस परिवार का शुभचिंतक सरोजपाल मुख्य मेहमान के रूप मे हैं, जिसने व्रती और उसके मित्रों की हत्या करवायी थीं। उसका स्वागत सुजाता को करना है यह बात उसे असहनीय है। सुजाता ने व्रती को परिवार के लोगों से देखा था,अब बाहर के लोगों की नजरों से देखना बाकी था। व्रती को चित्रों में, खुद ने सँभालकर रखे चित्रों में कई रंग भरने बाकी थे। ननामी निकलती या बहुरूपी डाकू की वेशभूषा में होता तब डरनेवाला व्रती " जेल ही हमारा विश्वविद्यालय है -" [3] दीवार पर लिखकर नक्सलवादी बन गया था। एक संपन्न परिवार में मानो वह एक अतिरिक्त व्यक्ति था। माँ के

खातिर ही घर में रहता, कामवाली हेम को अस्पताल ले जाता और किराने की दुकान पर चलकर जा रही हेम को रिक्शे में बिठाकर ले जाता है। आज भी व्रती को अपने घर में अनचाहे 'स्पोइल्ट चाईल्ड' के रूप में उल्लेख किया जाता है। व्रती इस घर का बालक था ऐसा कहते उसका परिवार शर्म का अनुभव कर रहा है। इसके सामने नंदिनी और समु की माँ के परिचय से व्रती क्यों ऐसा हो गया यह सहज रूप से जाना जा सकता है। इसकी प्रतीति सुजाता को क्रमश: होती है।

'दोपहर' खंड में सुजाता व्रती का मित्र समु के घर जाती है। समु और व्रती की हत्या एकसाथ हुई थीं, इसलिए दो दु:खी माँ का मिलन होता है। दोनों का वर्ग भिन्न है पर हृदय के भाव भिन्न नहीं है। सुजाता का पति दिव्यनाथ की एक पार्टी के खर्चे में से समु के परिवार का महिना निकल जाता है। समु की माँ सोचती है कि हम तो गरीब है पर व्रती, किसके लिए यह लड़ता था। समु की माँ के पहने कपड़ों से उसके घर की स्थिति सुजाता जान लेती है। जर्जरित घर के बावजूद भी सुजाता को यहाँ आकर शांति मिलती है। इतना ही नहीं बल्कि यहाँ बेटे व्रती के होने का एहसास होता है। व्रती ने अंतिम रात यहीं पर व्यतीत की थी। सामने से चाय माँगना, टूटे हेन्डलवाले कप को वह देखती है। यह सब उसे रोमांचित कर देता है। हेम और व्रती का व्यवहार देखनेवाली सुजाता समु की माँ का व्यवहार भी दर्ज करती है। एक ओर नीपा, तुली, सासुमाँ और टाईपिस्ट लड़की थीं। इन सबमें सुजाता मानो कहीं खो गयी थीं, अकेली थीं तो दूसरी ओर गमले में पौंधे को पानी देकर या किताबे पढ़कर जीवन व्यतीत करती सुजाता अब सच्चे अर्थों में जीने के लिए कटिबद्ध है। समु के घर उसका आना यह एक बहुत बड़ी बात थीं। घर से बैंक जाना, पुलीस स्टेशन जाना वहीं पर से उसकी स्वतंत्रता सूचित होती है। धीरे-धीरे वह व्रती के जीवन के विचारों को अनुभूत करती है। समु की माँ के दिल में व्रती की स्मृतियों का महासागर देखकर वह अपराधभाव से दब जाती है। एक ओर समु की माँ एक-एक व्रती की यादों को संजोकर जीवंत कर रही है तो दूसरी ओर उसका पिता ही व्रती की स्मृतियों को एक-एक करके नष्ट कर रहा है। सदेह नहीं तो स्मृति के रूप में भी व्रती उसे मंजूर नहीं है। तुली व्रतीमय बन गयी अपनी माँ सुजाता को कहती है --- "व्रती इज डेड, आपको जीवित लोगों के लिए सोचना चाहिए।" [4] लेकिन जीवित लोग याने कौन ? सरोजपाल या टोनी कापटिया ? अब सुजाता जीवित लोगों के लिए सोचती है। अब वह समु की बहन और हेम के लिए सोचती है। नंदिनी के लिए सोचती है। व्रती चेटरजी की माँ अब कॉमरेड 1084वें की माँ बनती है। व्रती की स्मृति के सच्चे हिस्सेदारों को मिलकर सुजाता को शांति मिलती है। घर में प्रयत्न से जान बुझकर नष्ट किया जानेवाला व्रती यहाँ पर जी रहा है। समु,ललटु, विजित, पार्थ की स्मृतियों में जी रहा है। दिव्यनाथ के परिवार के सामने समु का परिवार देखकर सुजाता अब व्रती के जीवन ध्येय को अच्छी तरह समझ लेती है। सुजाता अब जान चुकी है, निर्णय ले चुकी है। नंदिनी की मुलाकात से सुजाता को बल मिलता है। पुलिस के अमानुषी अत्याचारों के बाद भी नंदिनी हार नहीं स्वीकार करती है। उसने आँखे गवाँ दी है पर दृष्टि नहीं। बल्कि दृष्टि रूपी प्रकाश तो वह सुजाता में भी फैला देती है।

'शाम' खंड में नंदिनी- सुजाता की मुलाकात है। समु की माँ का घर देखने के बाद ललटू, विजित, पार्थ की बातें सुनकर सुजाता को व्रती का बदलाव समझमें आ जाता है। समु की बहन नहीं चाहती कि सुजाता उनके घर आये। चूहे का बिल में हाथी क्यों ? उसके आने से विरोधी उसका नुकशान कर सकते हैं। सुजाता अब यहाँ नहीं आयेगी पर लड़ेगी, विद्रोह करेगी, ऐसे आत्मबल के साथ वहाँ से विदा लेती है। नंदिनी का मध्यमवर्गीय परिवार है

। नंदिनी से पुलिस अत्याचार की जानकारी प्राप्त होती है । अनिद्य के विश्वासघात का पता चलता है । एकाकी अनुभव से वह घिर जाती है । व्रती जिसे चाहता था अब वह बिलकुल अकेली हो गई है । सोचकर सुजाता को बड़ा दु:ख होता है । वह नंदिनी के हाथ पर अपना हाथ रख देती है । यहाँ आक्रोश है, शोषितों के लिए धमकी है । नंदिनी की मुलाकात से सुजाता को अपनी पहचान में बल मिलता है ।

'रात' खंड में सगाई की पार्टी से पहले सुजाता नंदिनी के यहाँ से आती है । ठंड़ के दिनों में अँधेरा जल्दी हो जाता है । पर सुजाता के कमरे में प्रकाश है । दिव्यनाथ कितने ही समय से दरवाजे के बाहर चक्कर लगा रहे हैं । वे पहले की तरह ही कर्कश आवाज में चिल्ला उठे कि --- "घर लौटने का समय हो गया ? हद है यह तो..!" [5] सुजाता व्रतीमय है । दिव्यनाथ खरीखोटी सुनाते है तो सुजाता उसे चले जाने के लिए कह देती है । सुजाता का ऐसा व्यवहार मानो दिव्यनाथ के मुँह पर थप्पड़ पडी हो ऐसा लगता है । पूरा दिन कहाँ थीं , यह भी पूछ नहीं सका । सुजाता डटकर 'ना' बोल देती है और कहती है कि – " दो वर्ष पहले तक, पिछले बत्तीस साल से तुम अपनी शामें कहाँ बितात थे , किसको लेकर पिछले दस साल से टूर पर जा रहे हो, क्यों तुम अपनी पुरानी टाईपिस्ट के लिए मकान का किराया देते रहे - यह सब मैंने तुमसे कभी नहीं पूछा । तुम मझसे एक बात भी नहीं पूछोगे, किसी दिन भी नहीं पूछोगे !" [6] इतना ही नहीं, अब सुजाता मानो शेरनी की तरह दहाड़ रही है --- जब उम्र कम थी, तब समझती नहीं थी । उसके बाद तुम्हारी माँ ने तुम्हारे हर पाप, हाँ पाप को ढकने की कोशिश की, इसलिए पूछने की इच्छा भी नहीं हुई कभी । उसके बाद आई हैड नो इंटरेस्ट टु नो । लेकिन तुम जिस तरह अपने घर, अपने परिवार से चोरी-चोरी बाहर समय बिताते थे, मैंने वह नहीं किया । और भी सुनना चाहते हो ? " [7] दिव्यनाथ खिसियाने मुँह से सब सुन ही रहा था कि सुजाता से जाने का आदेश मिलते ही वह अपनी गर्दन पोंछकर निकल जाते हैं । पैरों की जूती जैसी जिसकी स्थिति थीं उस सुजाता में बिजली सा बल प्रकट हो जाता है । उसे अफसोस इस बात का है कि यह बल प्रकट करनेवाला व्रती आज मौजूद नहीं है । उसके बाद सुजाता नहाने चली जाती है । पानी को छूते ही व्रती की उँगलियाँ, विद्युत, स्मशानगृह में धड़ाम से बंद हो गया दरवाजा दिखाई देता है । सगाई की पार्टी चलती है । इसमें परिवार के लोगों द्वारा ही व्रती के जीवन की व्यर्थता की बात भी होती है । सुजाता और सरोजपाल आमने-सामने आ जाते हैं । कपड़ों से सुसज्ज सरोजपाल और विचारों से सज्ज सुजाता । सरोजपाल को मिठाई खिलाने से अच्छा अँधकार में विलिन हो जाना सुजाता मानती है । एक गाड़ी में व्रती की लाश दिखाई देती है, सरोजपाल दिखाई देते हैं । सुजाता को प्रश्न होता है कि – " क्या इसलिए व्रती मर गया ? सिर्फ़ इसलिए ? धरती को, पृथ्वी को इन लोगों के हवाले कर उनके ही हाथों में सौंपने के लिए क्या उसने अपनी जान दे दी ? नहीं, कभी नहीं, व्रती ई...ई...! " [8] यह सब सोचकर सुजाता की लम्बी दिल दहला देने वाली चीख मानो कलकत्ता के हर घर में, हवा के साथ प्रदेश के कोनो-कोने में गूँजने लगती है । सुजाता की मुक्ति उसकी स्वतंत्रता में व्रती, समु की माँ, हेम नौकरानी और नंदिनी का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है । इस रचना के संदर्भ में भरत मेहता ने ठीक ही कहा है – " तीसरे विश्वयुद्ध में ऐसे ही लेखकों की जरूरत हैं,जो इतिहास से भागने के बदले इतिहास का साक्षात्कार करायें । समय की संकुलता को जाँच सकें ।" [9] बिलकुल '1084वें की माँ' ऐसी ही सबल रचना है ।

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि इस उपन्यास में एक औरत की, ' एक माँ ' सुजाता की कहानी है। उसका जीवन रिश्ते निभाने में ही व्यतीत हो जाता है। पति और सास के दबाव में आकर काम किया करती है। आज भी घर- परिवारों में औरतों की इस प्रकार की स्थति कम नहीं हैं। बच्चे भी माँ की इस स्थिति से आँखें मूँदे हुए रहते हैं। सुजाता पढ़ी-लिखी औरत थीं, नौकरी कर रही थीं पर क्यों इसका विरोध न कर सकी यह बात इस उपन्यास में एक पहेली बनकर रह जाता है। पर 'सभी के तकदीर में सुख नहीं लिखा होता' सोचकर वह घरी की घरी बैठी नहीं रहती, किन्तु अपने बेटे के मौत का कारण जानने के लिए गली-गलियारों मे , बेटे के मित्रों से मिलकर सही कारण जानने की कोशिश करती है। बेटे को खोकर वह अपने बेटे को तो जान ही लेती है, साथ-साथ अपने आपको भी जान पाती है। इसप्रकार उच्च मध्यमवर्गीय पारिवारिक दृष्टि को प्रस्तुत करता एवं 70 के दशक के बंगाल के राजनीतिक माहौल को दर्शाता हुआ यह एक श्रेष्ठ उपन्यास है।

संदर्भ सूची :

1. भरत मेहता, 2012, भारतीय नवलकथा,पार्श्व पब्लिकेशन,अहमदाबाद,पृ.49-50
2. हिन्दी रूपान्तर- सांत्वना निगम,1979, 1084वें की माँ,राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ,पृ. 35
3. वही, पृ. 26
4. वही पृ.41
5. वही पृ.96
6. वही पृ.99
7. वही पृ.99
8. वही पृ.131
9. भरत मेहता, 2012,भारतीय नवलकथा,पार्श्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद,पृ.57